RAJBLL01667/20/1/2012-TC

अलख दृष्टि

ALAKH DRISHTI

(भाषा, दर्शन, साहित्य, संस्कृति एवं मानविकी की संवाहिका त्रैमासिक शोध पत्रिका)

वर्ष-1 • अंक-1 • अप्रैल-जून, 2013

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	लेखक	पण्ष्ठ सं.
०१.	शोध एवं शिक्षा के प्रति भारतीय दृष्टिकोण	प्रो. राजेन्द्र मिश्र	०४-०९
०२.	कालिदास की गौ सेवा	प्रो. हरिशंकर पाण्डेय	१०-१७
०३.	हिन्दी उपन्यासों का वैशिष्ट्य	डॉ. प्रेमसिंह के. क्षत्रिय	१८-२१
०४.	बौद्ध दर्शन में नैतिक मूल्य	डॉ. अरविन्द विक्रम सिंह	२२-३५
०५.	आचार्य महाप्रज्ञ का शिक्षा दर्शन	डॉ. बनवारी लाल जैन	३६-४१
०६.	गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का शिक्षादर्शन	डॉ. आनन्दप्रकाश त्रिपाठी	४२-४६
०७.	त्रिलोचन और उनके समानधर्मा-समकालीन कवि	डॉ. ओमप्रकाश शुक्ल	४७-५२
०८.	Gender and Human Rights	Anupam Kumar Verma and Jitendra Kumar Verma	५३-५७
०९.	Educational Philosophy of Rabindranath Tagore and Acharya Mahapragya : A Comparative Study	Dr. Samani Chaityapragya	५८-६१
१०.	Performance Management : An MBO Approach	Dr. Bijendr Pradhan and Dr. Amit Singh Rathore	६२-६७
	शोध समाचार		६८

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का शिक्षादर्शन

डॉ. आनन्दप्रकाश त्रिपाठी

उन्नीसवीं शताब्दी के सातवें दशक में तीन महाविभूतियों ने भारतभूमि में जन्म लेकर भारत की माटी को गौरवान्वित किया था। उनमें एक स्वामी विवेकानन्द थे, जिन्होंने भारतीय संस्कृति को विदेशों में भी महिमामण्डित किया था। दूसरे महात्मा गांधी थे, जिन्होंने सत्य और अहिंसा के पथ पर चलकर लम्बे समय से दासता की जंजीरों में जकड़ी भारतमाता को आजाद कराया था और तीसरी महाविभूति गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर थे, जिन्होंने कला, साहित्य एवं संगीत में विश्वस्तर पर ख्याति अर्जित की थी। उनके महाग्रन्थ गीतांजली पर साहित्य का नोबल पुरस्कार मिलना उसी ख्याति का संकेत है। कलकत्ता में 6 मई, 1861 को जन्म लेकर कला, दर्शन और साहित्य के क्षेत्र में अपरिमित उपलब्धि से जीवन पर्यन्त 1941 तक भारतभूमि को गौरवान्वित करते रहे। उन्होंने भारतीय शिक्षा को अपने मूलभूत विचारों से समृद्ध किया। उनके द्वारा स्थापित विश्वभारती से शिक्षा क्षेत्र में एक नई विचारधारा का सूत्रपात हुआ। यह विचारधारा किसी का अन्धानुकरण मात्र न होकर स्वानुसंधान और स्वानुभव पर आधारित थी। उनकी बुद्धि कुशाग्र थी। वे बिना सोचे, समझे, परखे किसी सत्य को गले नहीं लगाते थे। किसी भी सत्य को बुद्धि की कसौटी पर कसकर ही हृदयंगम करते थे। एक समय था जब भारतीय जनमानस एवं भारतीय शिक्षा शास्त्री पाश्चात्य विचारों का अंधानुकरण कर रहे थे। ऐसे समय में उन्होंने शिक्षा के नये सिद्धान्तों की खोज में अपने आपको समर्पित किया और इसके आधार पर जो तथ्य सामने आये वे उन्हें प्रकृतिवादी, रहस्यवादी, आत्मवादी और मानवतावादी के रूप में प्रस्तुत किये।

वे सच्चे प्रकृतिवादी थे। उन्होंने कभी समाज को हेयदृष्टि से नहीं देखा। उनका मानना था कि समाज का विकास आवश्यक है। वे ऐसे आधुनिक समाज की परिकल्पना करते थे, जिसमें आधुनिक वैज्ञानिकता के साथ अतीत की धार्मिकता एवं नैतिकता हो। उनका प्रकृतिवाद रूसो के प्रकृतिवाद से पूर्णतया भिन्न था। जहाँ रूसो ने समाज को सभी बुराइयों का आधार मानकर सामाजिक जीवन का विरोध किया, वहीं टैगोर के प्रकृतिवाद में पुरातन और अधुनातन विचारों का समन्वय है, अतः शिक्षा के क्षेत्र में उनके

उद्देश्य वे मानते हैं। उनका मानना था कि वह शिक्षा शिक्षा ही क्या जो स्वतन्त्र चिन्तन और विकास को महत्त्व न देती हो अतः उनके शिक्षादर्शन में स्वतन्त्र चिन्तन को अधिक महत्त्व मिला है। पुस्तकीय शिक्षा से बंधकर अध्ययन करना उन्हें मान्य नहीं था। वे विद्यार्थी को न ही सीमित रखना चाहते थे और न ही संकीर्ण बनाना चाहते थे। अतः जहाँ से भी जितना भी उसे सीखने को मिले, उसे बौद्धिक व्यायाम करते रहना चाहिए। अनुशासन व्यक्ति और समाज को सहज बनाता है अतः अनुशासित रहकर ही विकास किया जा सकता है। वे शारीरिक, बौद्धिक विकास के साथ ही साथ नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास (Moral And Spiritual Development) के भी हिमायती थे। आन्तरिक पवित्रता के लिए नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास को वे आवश्यक मानते थे। अच्छे रूप और आकृति वाला यदि मन और हृदय की पवित्रता नहीं रखता तो उनके अनुसार उसका जीवन निरर्थक है। वे विद्यार्थी के मस्तिष्क को खुला रखना चाहते थे। उन्होंने राष्ट्रवाद की सीमारेखा को भी जनमानस के लिए उपयुक्त नहीं माना। उन्होंने घोंसले और पिंजरे का उदाहरण देते हुए कहा कि घोंसला विकास में बाधक नहीं है। उन्मुक्त गगन में विचरण करने वाला पक्षी जब थक जाता है तो थोड़ी देर घोंसले में विश्राम कर अपनी यात्रा पुनः शुरू कर देता है। घोंसला विश्रामस्थली है न कि विकास में बाधक स्थान किन्तु पिंजरा पक्षी की उन्मुक्त उड़ान में बाधा है। यहाँ खान-पान की उत्तम व्यवस्था है किन्तु स्वतन्त्र विचरण में बाधक है। घोंसला स्वतन्त्र विचरण में बाधक नहीं है किन्तु स्वार्जित खान-पान का द्योतक है। ऐसी ही शिक्षा हमारे अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार (International Attitude) के विकास पर बल देती है। सीमाकरण व्यक्तित्व विकास में बाधक है अतः शिक्षा का उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण के विकास में साधक होना चाहिए। इस प्रकार गुरुदेव शिक्षा के उद्देश्य के अन्तर्गत शारीरिक, बौद्धिक, नैतिक, आध्यात्मिक एवं अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण के विकास को स्वीकार करते हैं। इसलिए यह कहना उपयुक्त होगा कि गुरुदेव की शिक्षा का उद्देश्य अत्यधिक व्यापक था।

टैगोर के शैक्षिक आधार स्रोतों पर उनके दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं वैज्ञानिक आविष्कारों का प्रभाव पड़ा है। दर्शन के अन्तर्गत व्यक्ति, जीव, ईश्वर, जगत् आदि के सम्बन्ध में उनके सोचने का दृष्टिकोण स्पष्ट है। वे आधुनिक आदर्शवादी हैं। प्राचीन आदर्शवाद और आधुनिक यथार्थवाद के समन्वय के वे पोषक हैं। उनका मानवतावादी दृष्टिकोण भी स्पष्ट है। वे मानव में ईश्वरत्व की कल्पना करते हैं। अतः उनके शिक्षा के आधार को दार्शनिक मानने में कोई असंगति नहीं है। वे शिक्षा की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि को समझाते हुए कहते हैं कि बच्चे को वैसी ही शिक्षा देनी चाहिए, जो उसकी मनोवैज्ञानिक मांग हो। विद्यार्थी की इच्छा के विरुद्ध शिक्षा उस पर थोपी नहीं जानी चाहिए। कला, साहित्य, दर्शन, व्याकरण, विज्ञान, संगीत आदि जिसमें उसकी अभिरुचि हो, वैसी ही शिक्षा उसे दी जानी चाहिए। इच्छानुसार, अभिरुचि अनुसार शिक्षा जहाँ व्यक्तित्व के विकास में साधक है, वहीं थोपी गई शिक्षा व्यक्तित्व विकास में बाधक है।

अतः शिक्षा का मनोवैज्ञानिक आधार स्वीकरणीय है। उनके अनुसार सामाजिक परिस्थितियाँ भी शिक्षा को प्रभावित करती हैं। अतः सामाजिक परिवेश के अनुसार शिक्षा उपयोगी है। वे व्यक्ति को समाज का एक अच्छा नागरिक बनाना चाहते हैं और समाजोपयोगी शिक्षा देने में विश्वास करते हैं। शिक्षा के लक्ष्य को राजनीति एवं राजनीतिक व्यवस्था भी प्रभावित करती है। जैसी राजनीतिक व्यवस्था होगी, उसी के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य बनते हैं और विचार प्रस्फुटित होते हैं। शिक्षा के वैज्ञानिक आधार की विवेचना करते हुए वे कहते हैं कि विचारों को प्रभावित करने का एक महत्त्वपूर्ण आधार है वैज्ञानिक दृष्टिकोण। समाज में जो नये-नये आविष्कार होते हैं, वे व्यक्ति के विचारों को प्रभावित करते हैं और वे पाठ्यक्रम का अंग भी बनते हैं। वे वैज्ञानिक, औद्योगिक तथा पाश्चात्य शिक्षा देने के भी समर्थक हैं, लेकिन वे उस सीमा तक ही पाश्चात्य शिक्षा को ग्रहण करना पसन्द करते हैं, जहाँ तक भारत का व्यक्तित्व नष्ट न हो।

प्रकृतिवादी विचार को अधिक महत्त्व दिया जाता है। वे जानते थे भारत अध्यात्म के सहारे ही कभी विश्वगुरु की उपाधि से अलंकृत था अतः उसकी अवहेलना नहीं की जा सकती तथा साथ ही साथ आधुनिक वैज्ञानिक विचारों के महत्त्व को भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता। अतः उन्होंने अपने प्रकृतिवादी शैक्षिक विचार के अन्तर्गत दोनों के अर्थात् अध्यात्मवाद और विज्ञानवाद के समन्वय पर बल दिया है।

गुरुदेव अनुसंधित्सु प्रतिभा के धनी थे। वे आत्मा की गहराई में उतरकर गहन चिन्तन से जो रहस्य पाते थे उसे बांटने का प्रयास करते थे। ऐसे ही रहस्य भरे चिन्तनों से उनका शैक्षिक दर्शन महिमा मंडित है। उनका यह रहस्यवादी चिंतन एकांगी और संकीर्ण नहीं था अपितु स्वस्थ, सबल एवं विस्तृत था। उन्होंने रहस्यवाद को जीवन की यथार्थभूमि पर आधारित कर वहीं रूके नहीं अपितु आगे चरणन्यास करते हुए शिक्षा के सभी स्तरों पर इसे लगू किया। जहाँ फ्रोबेल ने अपना ध्यान पूर्व प्राथमिक शिक्षा पर और पेस्तालात्सी ने प्राथमिक स्तर पर किये वहीं गुरुदेव ने शिक्षा के सभी स्तरों पर अपने रहस्यवादी चिंतन को आकार दिया। कहते हैं प्रकृतिवाद अध्यात्मवाद का विरोधी है। इसी कारण प्रायः प्रकृतिवादी अध्यात्मवाद की आलोचना भी करते हैं किन्तु टैगोर के विचार भिन्न थे। उनका प्रकृतिवाद अध्यात्मवाद का विरोधी न होकर पोषक है। उसी प्रकार उनका अध्यात्मवाद भी प्रकृतिवाद का पोषण करता है। उन्होंने इन दोनों वादों को विरोधी न मानकर एक-दूसरे के पूरक माना है। इसीलिए टैगोर के प्रकृतिवादी चिन्तन को एकांगी नहीं माना जाता। वह अध्यात्मवाद के सहारे व्यापक स्वरूप ग्रहण करता है। वे उच्च कोटि के मानवतावादी विचारक थे। उनके विचारों में मानवतावाद कूट-कूटकर संक्रान्त था। वे सदैव मानव मूल्यों के हितैषी थे। उन्होंने मनुष्य की गरिमा को कभी गिरने नहीं दिया। एक अर्थ में तो यह भी कहा जा सकता है कि केवल भौतिक जगत् का ही नहीं अपितु ईश्वर का भी वे मानवीकरण करते हैं। अपनी पुस्तक Religion of Man में वे कहते हैं—The idea of the humanity of God or the divinity of man.....is the main purpose of the book. कभी वे मनुष्य को ऊँचा उठाकर ईश्वरत्व से विभूषित करते तो कभी ईश्वर को मानव हृदय में बिठाकर उसके मानवीय रूपों को उभारने का प्रयत्न किया। ऐसा प्रतीत होता है कि टैगोर का ईश्वर एक ही सत्य ईश्वरत्व तथा मानव रूप दोनों का समन्वित संगठन है। उनके मानववाद का सार भी यही है कि मानवीयता की अनुभूति आनन्द का स्रोत है। अतः किसी भी वस्तु या तत्त्व में मानवीयता देखना, उसके मानवीय रूपों को पा लेना, आनन्द उत्पन्न करने का आधार है। उनका विश्वास था कि यह दुनिया मूल रूप से मानवीय दुनिया है। ये मानते थे कि ईश्वर को भी वहीं पर खोजना चाहिए, जहाँ पर किसान हल जोत रहा हो। उनमें भारतीय संस्कृति का 'वसुधैव कुटुम्बकम' का भाव प्रज्ज्वलित था। अतः राष्ट्र प्रेम के साथ-साथ उनमें अन्तर्राष्ट्रीय प्रेम का भाव भी जागृत था। वे भारत राष्ट्र से बहुत प्रेम करते थे। यहाँ की परिस्थितियों को सुधारना चाहते थे किन्तु उनका राष्ट्रप्रेम संकीर्णता के दायरे में नहीं था, या यों कहें कि उनका राष्ट्रप्रेम अन्तर्राष्ट्रीय प्रेम में बाधक नहीं है। वे समस्त विश्व को एक समझते थे और उनके शिक्षादर्शन का उद्देश्य भी यही है कि सभी इस योग्य बने ताकि वे विश्व नागरिकता का भाव अपने अन्दर विकसित कर सकें।

उनका शिक्षा दर्शन काल्पनिक नहीं था। वे सोद्देश्यपूर्ण शिक्षा के हिमायती थे। वे प्रत्येक निरुद्देश्य क्रिया को निरर्थक मानते थे। अतः उन्होंने शिक्षा का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य निर्धारित किया। वे शिक्षा को शारीरिक, बौद्धिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास का माध्यम मानते हैं। अपने कई लेखों में उन्होंने शिक्षा के उद्देश्यों पर लोगों का ध्यान केन्द्रित किया। 'शिक्षा के हेरफेर' नामक अपने एक लेख में उन्होंने छात्रों के गिरते स्वास्थ्य पर चिन्ता व्यक्त की तथा इस बात की चिन्ता भी व्यक्त की कि विद्यामन्दिरों में शारीरिक स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है। वे मानते थे कि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ आत्मा का वास है अतः उन्होंने शारीरिक विकास (Physical Development) को शिक्षा का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य माना है। शारीरिक विकास के साथ बौद्धिक विकास (Intellectual Development) को भी शिक्षा का महत्त्वपू-

टैगोर के शिक्षा दर्शन में पाठ्यक्रमों पर भी विशेष विचार हुआ है। वे पुस्तकों की अपेक्षा प्रकृति से शिक्षा ग्रहण करने के पक्षपाती थे। उनका मानना था कि अच्छी शिक्षा के लिए विद्या मन्दिरों में प्राकृतिक सौष्ठव आवश्यक है। वे अनेक ग्रंथों के लेखक होते हुए भी पुस्तकीय शिक्षा के हिमायती नहीं थे। वे बच्चों को पुस्तकीय भार से दूर रखना चाहते थे। वे बस्ते के बोझ से बचपन को कुचलना नहीं चाहते थे। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात पाठ्यक्रमों के सन्दर्भ में यह भी कि वे व्यक्तियों में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास करना चाहते थे। वे समस्त मानव जाति के प्रति प्रेम एवं सद्भावना के पक्षधर थे अर्थात् वे विश्वबन्धुत्व में विश्वास करते थे। वे अपने देश की भाषा, संस्कृति तथा सभ्यता के साथ-साथ अन्य क्षेत्रों की भाषा, संस्कृति एवं सभ्यता के अध्ययन पर बल देते थे। उनकी मान्यता थी कि इस प्रकार की शिक्षा से विभिन्न राष्ट्रों के बीच साझेदारी और सद्भावना स्थापित हो सकेगी। अतः गुरुदेव पाठ्यक्रमों में राष्ट्रीय विषयों के साथ-साथ मानवता का विकास करने वाले विषयों को महत्त्वपूर्ण स्थान देने के समर्थक थे। शांतिनिकेतन में उनके द्वारा लागू किया गया पाठ्यक्रम उनके आदर्शों के अनुरूप व्यापक स्वरूप लिये हुए था। बालक के जीवन में सभी पक्षों का विकास हो सके इसलिए उन्होंने पाठ्यक्रम को व्यापक बनाया। उनकी विश्वभारती में इतिहास, भूगोल, विज्ञान, साहित्य, प्रकृति अध्ययन आदि की शिक्षा तो दी जाती है, साथ ही अभिनय, क्षेत्रीय अध्ययन, भ्रमण, ड्राइंग, मौलिक रचना, संगीत, नृत्य आदि की भी शिक्षा का विशेष प्रबन्ध है। अस्तु यह कहने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए कि गुरुदेव व्यापक पाठ्यक्रमों के पक्षधर थे।

शिक्षण विधियों के अन्तर्गत वे सजीवता पर विशेष बल देते थे। उनका मानना था कि शिक्षण में सजीवता लाने के लिए बालक की रुचियों एवं संवेगों पर आधारित विधि का उपयोग होना चाहिए। शिक्षण के लिए विषयानुसार दृश्य उपस्थित कर शिक्षण देना चाहिए। इससे कक्षा में प्रमाद या आलस्य की घटना दृष्टिगोचर नहीं होगी। वे विद्यार्थी की स्वतन्त्रता के पक्षधर थे। विद्यार्थी जिस शिक्षण विधि को अंगीकार करे, उसी पर ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए। उनकी शिक्षण विधि का एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है-क्रिया सिद्धान्त (Activity Principle)। वे शरीर और मस्तिष्क की शिक्षा के लिए क्रिया को आवश्यक मानते थे। वे पेड़ पर चढ़ने, कूदने, बिल्ली या कुत्ते के पीछे दौड़ने, फल तोड़ने, हंसने, चिल्लाने, ताली बजाने, अभिनय करने को शिक्षण की आवश्यक प्रविधि या युक्ति के रूप में स्वीकार करते हुए प्रतीत होते हैं। शिक्षण विधि में उन्होंने प्रेम एवं सहानुभूति से ओत-प्रोत वातावरण को महत्त्व दिया। अस्तु जिज्ञासा के प्रति आस्था, स्वतन्त्रता, सजीवता, क्रिया सिद्धान्त, मनोवैज्ञानिक अभिरुचि एवं प्राकृतिक वातावरण उनकी शिक्षण विधि के लिए महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं।

गुरुदेव के शिक्षा दर्शन के अन्तर्गत गुरु-शिष्य के प्रगाढ़ सम्बन्ध को माना गया है। उनके अनुसार यथार्थ शिक्षण दीये की तरह होता है। जैसे दीये को उसकी खुराक तेल मिलना बन्द हो जाये तो वह बुझ जाता है, वैसे ही शिक्षक यदि पढ़ना, सीखना छोड़ देगा तो वह बुझ जायेगा। उन्होंने गुरु को ब्रह्मा, विष्णु, महेश न मानकर छात्र के पथ-प्रदर्शक के रूप में स्वीकार किया है। गुरु-शिष्य का सम्बन्ध पिता और पुत्र की तरह घनिष्ठ होना चाहिए। वे आवासीय विद्यालयों को छात्रों के विकास में उपयोगी मानते हैं। उनके अनुसार शिक्षक विद्यार्थी के हर कार्यकलापों पर ध्यान रखकर उसकी कमियों को दूर करता है। यहाँ शिक्षकों के व्यक्तिगत सम्पर्क में रहकर वे अपना सर्वांगीण विकास कर सकते हैं।

अस्तु यह कहने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए कि गुरुदेव शिक्षा को भारतीय संस्कृति पर आधारित करना चाहते थे और शिक्षा के माध्यम के रूप में मातृभाषा का उन्होंने समर्थन किया। शिक्षा के क्षेत्र में वे भारतीय विचारधारा का समर्थन करते हुए भी मानवतावादी दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर अन्तर्राष्ट्रीयता का विकास करना चाहते थे। उन्होंने शिक्षा को सत्यं, शिवं और सुन्दरम् की त्रिपथगा को प्रवाहित करने वाला माना है। भारतीय शिक्षा को महत्त्वपूर्ण अवदान देने के लिए उन्हें गुरुदेव के अलंकरण से नवाजा गया। विश्वभारती उनकी शैक्षिक विचारधारा का व्यावहारिक रूप है।

सन्दर्भ ग्रंथ–

01. The Religion of Man–Tagore Ravindra Nath,Allen & Unwin, London.

02. Personality–Tagore, Mac Million & Co., London, 1947.

03. Humanism–Tagore, St. Vaccum, Bombay, 1961.

04. Crisis in Civilization–Tagore, Shantiniketan, 1941.

05. Gitanjali–Tagore, Mac Million & Co., London.

06. Creative Unity–Tagore, Mac Million & Co., London, 1950.

07. समकालीन भारतीय दर्शन–बसन्त कुमार लाल, मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली.

08. विश्व के श्रेष्ठ शिक्षा शास्त्री–डॉ. रामशकल पाण्डेय, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा.

09. सौवर्णी (टैगोर विशेषांक)–सम्पादक डॉ. शंकरलाल शास्त्री, राजस्थान ग्रामोत्थान, शाहपुरा.

10. रवीन्द्रनाथ ठाकुर–बनर्जी हिरण्मय-सूचना प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली.

–निदेशक, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

जैन विश्वभारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय)

लाडनूं-341306, राजस्थान

◆ ◆ ◆